एन. सी. धौंडियल

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

11 दिसंबर, 2003

[एस. राजेंद्र बाबू, पी. वेंकटरामा रेड्डी

और एच. के. सेमा, न्यायमूर्तिगण

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम; धारा 13 (2) सह पठित धारा 13 (1) (ई) मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993; धाराएं 13, 36 (2) / विनियम; धारा 18 (1) (ए): अधिकारी-भ्रष्टाचार के आरोप-सी. बी. आई. द्वारा पूछताछ-उत्पीड़न/अवैध हिरासत/झूठे निहितार्थ का आरोप-राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एन. एच. आर. सी.) को शिकायत-एन. एच. आर. सी. द्वारा खारिज-एन. एच. आर. सी. द्वारा अनुमति दी गई याचिका की समीक्षा करें जिसमें कहा गया है कि सी. बी. आई. ने शिकायतकर्ता को कानून के किसी भी अधिकार के बिना हिरासत में रखा जिसके परिणामस्वरूप उसके मानवाधिकारों का उल्लंघन हुआ-सी. बी. आई. को दोषी अधिकारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई शुरू करने का निर्देश दिया-सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा दायर रिट याचिका-उच्च न्यायालय द्वारा खारिज-रिट अपील में, उच्च न्यायालय ने यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया-एन. एच. आर. सी./सी. ओ. पी./सी. बी. आई. अधिकारियों ने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका/रिट याचिका/स्थानांतरण याचिका दायर की-अभिनिर्धारित: हालांकि आयोग अपने अधिकार क्षेत्र का प्रभावी ढंग से प्रयोग करने के लिए सहायक शक्तियों के साथ निहित है, इसे बनाने वाले अधिनियम द्वारा निर्धारित मापदंडों के भीतर कार्य करना पड़ता है, मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम की धारा 36 (2) मानवाधिकारों के उल्लंघन के कथित कार्य की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति के बाद किसी मामले में संज्ञान लेने के मामले में आयोग पर प्रतिबंध लगाती है-हालांकि कानून का प्रावधान प्रकृति में प्रक्रियात्मक है, लेकिन अधिकार क्षेत्र में बाधाओं के रूप में कार्य कर सकता है-मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के संदर्भ में, निरंतर गलत जारी रखने की अवधारणा को अधिनियम के प्रावधान के तहत परिसीमित करने के लिए सेवा में नहीं डाला जा सकता है-असाधारण परिस्थितियों के अभाव में, यहां तक कि प्रासंगिक विनियमन आयोग को एक वर्ष की समाप्ति के बाद शिकायत की जांच करने का अधिकार

नहीं देता है-आयोग का निर्देश संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है-अतः खारिज किया जाता है

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; धारा 473:

'निरंतर गलत 'निरंतर अपराध'-चर्चा का अर्थ-शब्द और वाक्यांश।

एन. सी. धौंडियल बनाम भारत संघ एवं अन्य

सीबीआई ने दूरसंचार विभाग एक अधिकारी के आवास पर तलाशी ली| जाँच के दौरान उसे अस्पताल में भर्ती किया गया था| अस्पताल से छुट्टी मिलने पर, उन्हें आगे की पूछताछ के लिए सी. बी. आई. ने गिरफ्तार कर लिया। विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई. ने जेल प्राधिकारी को उसकी चिकित्सकीय जांच कराने के निर्देश के साथ उन्हें न्यायिक हिरासत में भेज दिया|

बाद में, अदालत ने उन्हें अस्थायी जमानत दे दी और निर्देश दिया कि उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया जाए और पूछताछ की जाए। जाँच पर, धारा 13 (2) आर/डब्ल्यू धारा 13 (1) (ई) के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम अधिकारी ने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के समक्ष सी. बी. आई. द्वारा झूठे निहितार्थ, अवैध हिरासत और उत्पीड़न का आरोप लगाते हुए शिकायत दर्ज कराई। एन. एच. आर. सी. ने शिकायत का संज्ञान लिया और सी. बी. आई. से रिपोर्ट प्राप्त की। उसने शिकायत में कोई तथ्य नहीं पाया और उसे खारिज कर दिया।

शिकायतकर्ता ने दूसरी याचिका दायर की। एन. एच. आर. सी. ने याचिका को समीक्षा याचिका के रूप में माना और अभिनिर्धारित किया कि शिकायतकर्ता को सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा बिना किसी कानूनी प्रधिकार के वास्तविक हिरासत में रखा गया था, जिसके परिणामस्वरूप उसके मानवाधिकारों का उल्लंघन हुआ। आयोग ने सी. बी. आई. को दोषी अधिकारियों के खिलाफ उचित अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दिया। इससे असन्तुष्ट होकर सी.बी.आई. अधिकारियों ने एक रिट याचिका दायर की, जिसे उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया। अपील में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने मामले में यथास्थिति बनाए रखने के लिए अंतरिम निर्देश जारी किए। एन. एच. आर. सी. और शिकायतकर्ता दोनों ने अंतरिम आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका दायर की।

इस बीच, सीबीआई के एक अधिकारी ने एन. एच. आर. सी. के आदेश के विरुद्ध एक रिट याचिका उच्चतम न्यायालय के समक्ष दायर की और शिकायतकर्ता और एन. एच. आर. सी. ने उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित मामलों के हस्तांतरण के लिए स्थानांतरण याचिकाएं दायर कीं।

इसलिए वर्तमान रिट याचिका और स्थानांतरण याचिकाएँ।

रिट याचिका को स्वीकृत करते हुए और विशेष अनुमति याचिकाओं एवं हस्तांतरण याचिकाओं को खारिज करते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:

1.1. आयोग ने संबंधित अधिकारियों को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर नहीं दिया, जिन अधिकारियों को नोटिस दिया गया था और न ही साक्ष्य पेश करने का कोई अवसर दिया|

शिकायत का निर्धारण समीक्षा याचिका के प्राक्कथनों और संबंधित अधिकारियों के प्रत्युत्तरों के आधार पर किया गया| अधिकारियों के तर्क को व्यापक रूप से संभावनाओं के आधार पर परीक्षित किया गया और इस आधार पर पहुंचा गया कि संबंधित अधिकारी मानवाधिकारों के उल्लंघन के दोषी थे |

1.2. आयोग जो एक 'विशिष्ट विशेषज्ञ निकाय' है, इसमें संदेह नहीं है कि उसे मानवाधिकारों की रक्षा का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया है, लेकिन आयोग के पास कोई असीमित अधिकार क्षेत्र नहीं है और न ही यह वैधानिक सीमा के अवमूल्यन में पूर्ण शक्तियों का प्रयोग करता है| आयोग अपने प्रावधानों से बाध्य है। इसके कर्तव्य एवं कार्यों को मानव अधिकार निवारण अधिनियम द्वारा परिभाषित और सीमित किया गया है। हालाँकि, इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसके पास प्रदत्त शक्तियों के संबंध में अपने अधिकार क्षेत्र का प्रभावी ढंग से प्रयोग करने के लिए आनुषंगिक या सहायक शक्तियाँ हैं, लेकिन आयोग को अनिवार्य रूप से अधिनियम के मापदंडों के भीतर इसे बनाने वाले अधिनियम द्वारा निर्धारित और निहित क्षेत्राधिकार की सीमाओं में कार्य करना चाहिए। आयोग उन मंचों में से एक है जो मानवाधिकारों के उल्लंघन से उत्पन्न होने वाली शिकायतों का निवारण कर सकता है| भले ही यह जांच करने और कुछ वैधानिक बाधाओं या बाधाओं के कारण निवारण करने की स्थिति में न हो, पीड़ित व्यक्ति अन्य उपचारों के बिना नहीं हैं। आयोग की समीक्षा में अंतर्निहित धारणा एक गलत आधार पर टिकी हुई है कि व्यक्ति यदि आयोग इस मामले को नहीं उठाता है तो मानवाधिकारों के उल्लंघन से पीड़ित व्यक्ति को उपचार के बिना छोड़ दिया जाएगा। (685 - सी-डी-ई-एफ]

1.3. अधिनियम की धारा 36 (2) मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले कथित कार्य की तिथि के एक वर्ष की समाप्ति के बाद किसी भी मामले की जांच करने वाले आयोग के खिलाफ प्रतिबंध लगाती है| अनुभाग का शीर्षक या सीमांत शीर्षक इंगित करता है कि यह एक न्यायिक प्रतिषेध क्षेत्र है। सीमा की अवधि, हालांकि मूल रूप से प्रक्रियात्मक प्रकृति की है, कुछ स्थितियों में अधिकार क्षेत्र में बाधाओं के रूप में भी काम कर सकती है। धारा 36 (2) के तहत निषेध के अंतर्गत आयोग द्वारा गलत जारी रखने के सिद्धांत और बार-बार होने वाले कारणों को लागू करके समाप्त करने की मांग की जाती है|

आयोग के अनुसार मानव अधिकार का प्रत्येक उल्लंघन तब तक निरंतर गलत है जब तक तक कि उचित क्षतिपूर्ति नहीं की जाती है। यह दृष्टिकोण, यदि स्वीकार किया जाता है, तो धारा 36 (2) को व्यावहारिक रूप से एक अप्रभावशाली उपबंध बनाता है। इसके अलावा, अधिनियम की धारा 36 (2) में प्रयुक्त भाषा के अनुसार, गलत को जारी रखने की अवधारणा को इस मामले में सेवा में बिल्कुल भी नहीं लगाया जा सकता था। अवैध निरोध के

मामले में, आपत्तिजनक कार्य को तब किया गया माना जाना चाहिए जब किसी व्यक्ति को हिरासत में रखा जाता है और यह तब तक जारी रहता है जब तक कि प्रभावित व्यक्ति अवैध हिरासत में रहता है। निरूधात्मक कार्य एक निश्चित समय पर पूर्ण होता है और यह तब तक जारी नहीं रहता है जब तक कि अनाधिकृत निरोध समाप्त हो जाता है। यह अवैध निरोध का प्रभाव नहीं है जो धारा 36 (2) द्वारा विचार किया गया है, बल्कि यह स्वयं अवैध कार्य है।

[686 - बी-सी, ई, जी-एच; 687-ए-बी-सी]

एस.एस. गाडगिल बनाम एम/एस। लाल एंड कंपनी, आकाशवाणी (1975) एससी 171; उत्तम दास बनाम। एस.जी.पी.सी. [1996] 5 एससीसी 71 और भिंका बनाम चरण सिंह, आकाशवाणी (1959) एससी 960, पर भरोसा किया।

1.4. तत्काल मामले में, यह कहना एक विरोधाभास होगा कि शिकायतकर्ता /अधिकारी की गिरफ्तारी या हिरासत से परे कुछ अवधि कानून के अनुसार थी और साथ ही गिरफ्तारी/निरोध गलत बना रहा। इसलिए ऐसा नहीं हो सकता। निरंतर गलत की श्रेणी के तहत लाया गया जो आपराधिक कानून के क्षेत्र में 'निरंतर अपराध' अभिव्यक्ति के अनुरूप है। यह नहीं कहा जा सकता है कि शिकायतकर्ता को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने और कानून के अनुसार रिमांड प्राप्त करने के बाद भी हिरासत का कथित गलत कार्य हर दिन दोहराया जाता है। 3.4.1994 से परे शिकायतकर्ता का निरोध कथित गलत करने वालों के सकारात्मक या निष्क्रिय आचरण के माध्यम से कानून द्वारा लगाए गए दायित्व का उल्लंघन नहीं था। इसलिए, इसे निरंतर गलत बताना अनुचित है। इसलिए, शिकायत की जाँच शुरू करने के लिए एक वर्ष की अवधि

3.4.1995 को समाप्त हो जाती है। जिस तरह धारा 473 द.प्र.स. अधिनियम में एक वर्ष की सीमा की अवधि बढ़ाने का कोई प्रावधान नहीं है। [687 - डी-ई-एफ]

1.5. विनियमों के विनियम 8 (1) (ए) का तात्पर्य है कि यदि अतिविशिष्ट परिस्थितियां मौजूद हैं, तो एक वर्ष की समाप्ति के बाद भी शिकायत की जांच की जा सकती है। हालाँकि, इस मामले में कोई असाधारण परिस्थितियाँ सामने नहीं आई हैं। लगभग 4 वर्षों के लिए शिकायतकर्ता चुप रहे। इस लंबी खामोशी के लिए शिकायत में दिया गया स्पष्टीकरण यह था कि वह इस धारणा में थे कि एनएचआरसी को मामले की सूचना देकर वह सीबीआई अधिकारियों का विरोध कर रहे होंगे, लेकिन, यह महसूस करने के बाद कि वे निष्पक्ष और

निष्पक्ष रूप से कार्य नहीं कर रहे थे और वे उसे परेशान करना जारी रखा, उसने एनएचआरसी के समक्ष याचिका दायर करने के बारे में सोचा। आयोग ने अपनी ओर से इस स्पष्टीकरण का उल्लेख नहीं किया, जो वास्तव में कोई स्पष्टीकरण नहीं है, और न ही उसने सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2003] से पहले लंबे समय के अंतराल के बाद हस्तक्षेप को उचित ठहराने वाली किसी भी असाधारण परिस्थितियों का उल्लेख किया।

अधिनियम की धारा 36 (2) द्वारा लिखित। आयोग ने इस प्रकार गलत कार्य जारी रखने के सिद्धांत का आह्वान करके अधिकार क्षेत्र पर अंकुश लगाने की कोशिश की जिसे बिल्कुल भी लागू नहीं किया जा सकता है। इसलिए, आयोग द्वारा सी. बी. आई. के निदेशक को दिया गया निर्देश, जिसका निस्संदेह रिट याचिकाकर्ता के सेवा जीवन पर प्रभाव पड़ता है, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। इसलिए निरस्त कर दिया गया। [687 - जी-एच; 688-ए-बी-सी-डी]

परमजीत कौर बनाम। पंजाब राज्य, [1999] 2 एस. सी. सी. 131, पर निर्भर था।

1.6. सवाल यह है कि क्या आयोग के पास बंद शिकायत को फिर से खोलने और नई सामग्री अनुपस्थिति में जांच करने की इसकी शक्ति है| आयोग ने इसी धारणा के आधार पर निष्कर्ष दिया कि यह अधिनियम की धारा 36 (2) के निषेध के अंतर्गत आयोग द्वारा क्षेत्राधिकार का उल्लंघन है |

झारखंड उच्च न्यायालय इस निर्णय के आलोक में अपने समक्ष लंबित संबंधित रिट याचिकाओं/एल.पी.ए. का त्वरित निपटारा कर सकता है।

[688 - एफ-जी; 689-ए-बी]

सिविल ओरिजिनल क्षेत्राधिकार . रिट याचिका (सिविल) संख्या 42 ऑफ 2001

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत।

के साथ

आई. पी. (सिविल) संख्या। 180, 261, 283, 293, 850 और 877/2001 और विशेष अनुमति याचिका (सिविल) नं. 8220 , 11186 और 2001 का 14392।

आर. एन. त्रिवेदी, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, राजीव धवन, एन. गोस्वामी, ऋषि मल्होत्रा, प्रेम मल्होत्रा, सुश्री सुनीता शर्मा, श्री प्रकाश सिन्हा, निखिल नय्यर, अनिल श्रीवास्तव, राजीव शर्मा, ए. डी. एन. राव, पी. परमेश्वरन, सुश्री इंदु गोस्वामी, संजय आर. हेगड़े, सुश्री सुषमा सूरी, रमेश बाबू एम. आर. और जी. प्रकाश उपस्थित दलों के लिए।

डब्ल्यू. पी. में याचिकाकर्ता-व्यक्तिगत (अनुपस्थित) रिट याचिका (सिविल) सं.42/2001
डब्ल्यू. पी. में प्रतिवादी-व्यक्तिगत (अनुपस्थित) रिट याचिका (सिविल) सं. 42/2001

न्यायालय का निर्णय **पी. वेंकटरामा रेड्डी, न्यायमूर्ति** द्वारा दिया गया था|

रांची में दूरसंचार विभाग के एक अधिकारी (जिसे इसके बाद 'शिकायतकर्ता' के रूप में संदर्भित किया गया है) श्री अशोक कुमार सिन्हा के आवासीय घर पर सी. बी. आई. के अधिकारियों के द्वारा खोजबीन की गई| पटना और रांची में उनके करीबी रिश्तेदारों और ठेकेदारों के घर में भी खोजबीन की गई। इस बीच उन्हें दो बार अस्पताल में भर्ती कराया गया था। रांची के सी. सी. आई. अस्पताल से पर छुट्टी मिलने पर, याचिकाकर्ता को 03.04.1994 को "उससे पूछताछ करने के उद्देश्य से" गिरफ्तार किया गया था और उसे विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई., रांची न्यायालय के समक्ष 10 दिनों के लिए न्यायिक हिरासत में भेजने के अनुरोध के साथ पेश किया गया। विशेष न्यायाधीश ने उसे एक उसे पखवाड़े के लिए जेल अधीक्षक को उसकी चिकित्सकीय जांच कराने और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के निर्देश के साथ न्यायिक हिरासत में भेज दिया। जेल अधीक्षक की रिपोर्ट मिलने पर उन्हें सात दिनों के लिए पुलिस हिरासत में भेज दिया गया और 13.4.1994 से उन्हें एक महीने के लिए अस्थायी जमानत पर रिहा करने का एक और आदेश था। अदालत ने यह भी निर्देश दिया कि उन्हें सी. सी. आई. अस्पताल में भर्ती कराया जाना चाहिए और वहीं पूछताछ की जानी चाहिए| सी. बी. आई. ने अभियोजन की मंजूरी मिलने के पश्चात 18.8.1998 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह पठित धारा 13 (1) (ई) के तहत आय के ज्ञात स्रोतों से असमान संपत्ति होने के कारण एक आरोप पत्र दाखल किया|

एक दिन बाद, यानी 19.8.1998 पर, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (संक्षेप में 'एन. एच. आर. सी.') को श्री ए. के. सिन्हा से एक शिकायत मिली जिसमें उन्हें 25.3.1994 से 3.4.1994 तक अवैध हिरासत में रखने का आरोप लगाया गया था। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि श्री एन. सी. ढौंडियाल एस. पी., सी. बी. आई. (डब्ल्यू. पी. (सी) 42/2001 में याचिकाकर्ता सहित सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा उनक उत्पीड़न किया गया और यातना दी गई|

उन्होंने आरोप लगाया कि एक झूठा मामला था विरोध के कारण बाहरी कारणों से उसके खिलाफ मामला दर्ज किया गया उनके प्रति एस. पी. श्री धौंडियाल का रवैया। शिकायतकर्ता ने लगाया आरोप कि सी. बी. आई. की कार्रवाई के दौरान उनकी अवधि 25.3.1994 से

3.4.1994 गैरकानूनी नजरबंदी हुई और उसके साथ कठोर व्यवहार किया गया| उसकी कैंसर की बीमारी बढ़ गई (जिसका बाद में पता चला) और एक गंभीर

बॉम्बे के टाटा मेमोरियल कैंसर अस्पताल में उसकी जान बचाने के लिए सर्जरी करनी पड़ी। शिकायत में सी. बी. आई. के सात अधिकारियों का नाम लिया गया था। जो शिकायतकर्ता के अनुसार, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार थे| उसकी अवैध हिरासत, एन. एच. आर. सी. ने शिकायत का संज्ञान लिया और निदेशक, सी. बी. आई. से एक रिपोर्ट की मांग की। रिपोर्ट पर विचार करते हुए एन. एच. आर. सी. के विद्वान सदस्य ने पाया कि इसमें कोई सार नहीं था और किसी कार्रवाई की आवश्यकता नहीं पाई गई।

विद्वान सदस्य ने आगे कहा कि "सी. बी. आई. द्वारा लिए गए रुख में काफी बल था कि यह शिकायत केवल उन सी. बी. आई. अधिकारियों का मनोबल गिराने के लिए दर्ज की गई है जो उत्साहपूर्वक जाँच कर रहे हैं।" इसके लिए कार्यवाही

6.11.1998 पर प्रभाव तैयार किया गया था। इसके बाद शिकायतकर्ता ने कुछ तथ्यों की ओर इशारा करते हुए 21.9.1999 पर एक याचिका दायर की, जो उसके अनुसार 6.11.1998 पर दर्ज निर्णय लेते समय एन. एच. आर. सी. का ध्यान नहीं गया। याचिकाकर्ता ने मामले को फिर से खोलने और उसे अपना मामला पेश करने का पर्याप्त अवसर देने के बाद एक नया निर्णय लेने का अनुरोध किया। एन. एच. आर. सी. के विद्वान अध्यक्ष ने श्री ए. के. सिन्हा द्वारा दायर याचिका को समीक्षा याचिका के रूप में माना और 25.03.1994 से 03.04.1994 की अवधि के दौरान सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा शिकायतकर्ता को अवैध रूप से हिरासत में रखने का प्रथम दृष्टया मामला पाए जाने पर, 12.06.2000 की कार्यवाही में दर्ज निष्कर्षों को याद करना और मामले में आगे की जांच करना उचित समझा। तदनुसार, श्री एन. सी. ढौंडियाल, श्री नारायण झा, श्री पी. के. पाणिग्रही और श्री बी. एन. सिंह नाम के चार सी. बी. आई. अधिकारियों को कारण बताएँ नोटिस जारी किए गए कि सक्षम प्राधिकारी को इसके लिए उचित सिफारिश क्यों नहीं की जानी चाहिए। अनुशासनात्मक कार्रवाई और ऐसी अन्य कार्रवाई शुरू करना जो समीचीन हो। सी. बी. आई. के संबंधित अधिकारियों से जवाब प्राप्त होने पर, विद्वत अध्यक्ष ने अपनी दिनांकित कार्यवाही द्वारा सी. बी. आई. अधिकारियों के बयान को खारिज कर दिया, उनके द्वारा उठाए गए आपत्तियों को कानून के बिंदुओं पर खारिज कर दिया और कहा कि शिकायतकर्ता उस अवधि के दौरान बिना कानून के अधिकार के उक्त अधिकारियों की वास्तविक हिरासत में था। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत आयोग ने याचिकाकर्ता और अन्य अधिकारी को उपरोक्त निर्देश देने से पहले, व्यक्तिगत सुनवाई या रिट में साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया था|

एनएचआरसी के उक्त आदेश पर सवाल उठाते हुए, श्री पी. के. पाणिगढी, तत्कालीन इंस्पेक्टर, सी. बी. आई. ने पटना उच्च न्यायालय (रांची पीठ) में अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका सी. डब्ल्यू. जे. सी. 2454/2000 दायर की। विद्वान न्यायाधीश ने 14.8.2000 दिनांकित आदेश द्वारा रिट याचिका को खारिज कर दिया। विद्वान न्यायाधीश ने

कहा कि रिट याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई सभी दलीलों पर एन. एच. आर. सी. द्वारा विचार किया गया और उन्हें विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं मिला। हालाँकि, विद्वान न्यायाधीश ने यह स्पष्ट कर दिया कि विचाराधीन आदेश अनुशंसा और अनुशासनात्मक कार्यवाही की प्रकृति में था जब और जब शुरू किया गया था| अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर स्वतंत्र रूप से निपटाया जाना चाहिए। रिट याचिका में इस आदेश के खिलाफ श्री पाणिग्रही ने एक याचिका दायर की अपील एल. पी. ए. सं. 309/2000 (आर)। दिनांक 22.1.2001 के एक स्पष्ट आदेश द्वारा, डिवीजन बेंच ने अपील को स्वीकार कर लिया क्योंकि अपील ने महत्वपूर्ण और बहस योग्य सवाल उठाए थे। अपील में उत्पन्न होने वाले कानूनी प्रश्नों को डिवीजन बेंच द्वारा मोटे तौर पर इंगित किया गया था। एनएचआरसी को नोटिस का आदेश देते समय, अपीलार्थी के संबंध में यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया था। एल. पी. ए. के लंबित रहने तक पारित किए गए इस अंतरिम आदेश पर सवाल उठाते हुए, शिकायतकर्ता श्री ए. के. सिन्हा ने एस. एल.पी.(सी) सं.14392/2001 दायर किया। एनएचआरसी ने उसी अंतरिम आदेश के खिलाफ एसएलपी (सी) 8220/2001 दायर किया। एल. पी. ए. की स्वीकृति के बाद, दो अन्य सी. बी. आई. अधिकारी श्री विश्वनाथ सिंह, तत्कालीन एस. आई., सी. बी. आई. और श्री एन. झा, तत्कालीन डिप्टी एस. पी., सी. बी. आई. ने भी संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिकाएं दायर कीं। विद्वान एकल न्यायाधीश ने एल. पी. ए. में पारित अंतरिम आदेश के बाद उन रिट याचिकाकर्ताओं के संबंध में भी यथास्थिति का आदेश दिया। आगे यह आदेश दिया गया कि एल. पी. ए. के निपटारे के बाद रिट आवेदनों की सुनवाई की जाएगी, इस आदेश को स्वीकार करते हुए, शिकायतकर्ता ए. के. सिन्हा ने एस. एल. पी. (सी) संख्या दायर की। 11182 / 2001 और 11186/2001। जबकि, श्री एन. सी. धौंडियाल, तत्कालीन एस. पी., सी. बी. आई., रांची ने इस न्यायालय में अनुच्छेद 32 के तहत सीधे रिट याचिका (सी) संख्या 42/2001 दायर की थी, जिसमें एन. एच. आर. सी. के दिनांक 12.6.2000 के आदेश पर सवाल उठाया गया था। इस अदालत ने 15.1.2001 पर नोटिस जारी करने का निर्देश दिया। इसके बाद, स्थानांतरण याचिकाओं का एक समूह, ए.के. सिन्हा द्वारा तीन और एन. एच. आर. सी. द्वारा तीन, इस अदालत में एल. पी. ए. और रिट याचिकाओं को स्थानांतरित करने के अनुरोध के साथ दायर किया गया।

इस न्यायालय और एन. सी. धौंडियाल द्वारा दायर 2001 के डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 42 के साथ उसी पर सुनवाई करने के लिए एसएलपी, टीपी और रिट याचिका को एक साथ

समूहीकृत किया गया है । हस्तांतरण का आधार यह है कि इसी तरह के मुद्दे हैं उच्च न्यायालय में लंबित एल. पी. ए./रिट याचिकाओं और इस न्यायालय में लंबित रिट याचिका में निर्णय के लिए शामिल और अंतिम निपटान के लिए पोस्ट किया गया। इस तरह ये 11 मामले हमारे सामने हैं।

आगे बढ़ने से पहले, इससे संबंधित तथ्यात्मक पहलुओं पर सी. बी. आई. के अधिकारियों द्वारा लिए गए रुख का संक्षिप्त संदर्भ देना आवश्यक है। 25.3.1994 से 3.4.1994 के बीच कथित निरोध और इस विवादित मुद्दे पर एन. एच. आर. सी. द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष।

सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा दिया गया तथ्यात्मक विवरण इस प्रकार हैः

25.3.1994 पर तलाशी के बाद शिकायतकर्ता को डी. एस. पी., सी. बी. आई. के साथ रहने के लिए कहा गया| पूछताछ के दौरान, शिकायतकर्ता ने खुलासा किया कि उसने पटना में उनके विभाग के एक ठेकेदार रंजन पांडे को कुछ कागजात, पासबुक्स और लॉकर की चाबियाँ एक ब्रीफकेस में रखकर सौंपी | उन्होंने जांच में सहायता करने के उद्देश्य से सी. बी. आई. अधिकारियों के साथ पटना जाने की इच्छा व्यक्त की। तदनुसार, श्री एन. झा, श्री पाणिग्रही और श्री बी. एन. सिंह ने शिकायतकर्ता के साथ शाम को पटना की यात्रा शुरू की। रांची के बाहरी इलाके में पहुंचने के बाद, श्री सिन्हा ने सीने में दर्द की शिकायत की और अपने द्वारा नामित एक निजी नर्सिंग होम में जाँच करवाना चाहते थे। तदनुसार, उन्हें उस अस्पताल में ले जाया गया लेकिन संबंधित डॉक्टर उपलब्ध नहीं थे। इसलिए, शिकायतकर्ता के अनुरोध पर, उन्हें सेंट्रल कोलफील्ड अस्पताल रांची ले जाया गया और उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया गया। उनके परिवार के सदस्य उनके इलाज के लिए अस्पताल आने के बाद सीबीआई के अधिकारी अस्पताल से चले गए। 26.3.1994 की सुबह, उन्हें ईसीजी सहित कुछ परीक्षणों के बाद अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। शिकायतकर्ता ने तब हवाई जहाज से पटना जाने की अपनी तैयारी व्यक्त की। उन्होंने अपना टिकट खुद खरीदा था और सी. बी. आई. अधिकारियों के साथ पटना गए। पटना में श्री रंजन पांडे के घर की तलाशी लेने पर ब्रीफकेस नहीं मिल सका। हालांकि, उनके आवास से कुछ कागजात जब्त किए गए थे। फिर शिकायतकर्ता द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर उसके दो करीबी रिश्तेदारों के घरों की उस दिन देर रात तक तलाशी ली गई। तलाशी पूरी होने पर सी. बी. आई. के अधिकारी पटना में कोल इंडिया गेस्ट हाउस में रुके। याचिकाकर्ता ने स्वेच्छा से उस रात उनके साथ इस स्पष्ट आधार पर रहने की इच्छा व्यक्त की कि बाद में वह अपने रिश्तेदारों के साथ रहने में शर्मिंदा महसूस करता था। 27.3.1994 को, रांची के लिए उड़ान रद्द कर दी गई थी और अगले दिन होली के त्योहार के कारण रांची के लिए लाई गई ट्रेनों के समय कार्यक्रम में कुछ अनिश्चितता थी। इसलिए शिकायतकर्ता के साथ अधिकारियों ने 27 मार्च की रात को पटना से बस ली और 28 मार्च

की सुबह रांची पहुँचे। शिकायतकर्ता से रांची में सीबीआई कार्यालय में सुबह 8:30 बजे उपस्थित होने का अनुरोध किया गया था। तदनुसार, वह सी. बी. आई. कार्यालय आया और पूछताछ के दौरान उसने खुलासा किया कि महत्वपूर्ण दस्तावेजों के साथ एक और ब्रीफकेस दूसरे ठेकेदार के पास रखा गया था। उक्त ठेकेदार के घर की तलाशी लेने पर कुछ भी आपत्तिजनक नहीं मिला। सी. बी. आई. कार्यालय लौटते समय, याचिकाकर्ता ने फिर से बताया कि वह ठीक महसूस नहीं कर रहा था और अनुरोध किया कि उसके ससुर को सूचित किया जाए। तदनुसार, उनके ससुर सी. बी. आई. कार्यालय आए और वे दोनों सी. सी. आई. अस्पताल चले गए। उसके ससुर ने उसे भर्ती कराया। अस्पताल और इलाज के लिए पैसे भी जमा किए। 1.4.1994 पर, जब शिकायतकर्ता अस्पताल में था, तब भी वह दो ब्रीफकेस के साथ सीबीआई कार्यालय आया कहा जाता है कि ब्रीफकेस दोनों ठेकेदारों के पास रखे गए थे। उन ब्रीफकेसों को सी. बी. आई. कार्यालय में गवाहों की उपस्थिति में जब्त कर लिया गया। ब्रीफकेसों में कोई आपत्तिजनक सामग्री नहीं थी। बिना शिकायतकर्ता आगे की पूछताछ में भाग लेते हुए वापस सी. सी. आई. अस्पताल चले गए। उन्हें दोपहर 12 बजे सी. सी. आई. अस्पताल से छुट्टी दे दी गई और आई. ओ. के अनुरोध पर वे सी. बी. आई. कार्यालय गए। चूंकि उसने जांच एजेंसी के साथ सहयोग नहीं किया और अपने द्वारा स्वीकार किए गए निवेश आदि से संबंधित दस्तावेजों को पेश करने के लिए भी आगे नहीं आया, इसलिए उसे गिरफ्तार करने और हिरासत में पूछताछ करने का निर्णय लिया गया। यही कारण है कि उसे 3.4.1994 पर गिरफ्तार किया गया और उसे पुलिस हिरासत में भेजने की प्रार्थना के साथ विशेष न्यायाधीश, सीबीआई, रांची के सामने पेश किया गया।

सी. बी. आई. के अधिकारियों ने पुलिस कर्मियों को अस्पताल के अंदर या तो 25.3.1994 पर या दूसरे अवसर पर रखने से इनकार किया। उन्होंने अपने इस तर्क के समर्थन में केस डायरी में प्रविष्टियों पर भरोसा किया कि उन्हें 3.4.1994 तक गिरफ्तार नहीं किया गया था। शिकायतकर्ता को पहले दिन यानी 25.03.1994 पर चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिए उनके द्वारा उठाए गए कदमों के बारे में सी. बी. आई. अधिकारियों का रुख रहा है कि यह मानवीय आधार पर किया गया था। लेकिन इसलिए नहीं कि वह उनकी हिरासत में था।

आयोग सी. बी. आई. के अधिकारियों के बयान को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था| एनएचआरसी के विद्वान अध्यक्ष द्वारा दी गई उनके बयान को खारिज करने के लिए प्रासंगिक टिप्पणी निम्नलिखित है :

"आयोग ने अपनी चिंता व्यक्त की है लेकिन उपरोक्त स्पष्टीकरण को स्वीकार करने के लिए इच्छुक नहीं है क्योंकि यह अवास्तविक है कि गलत करने वाला अपने गलत कार्यों का ब्योरा रखेगा |इस तरह के अभिलेख के अनुपस्थिति मे केस डायरी जो कि सूचनकर्ता द्वारा तैयार कि गई है पर स्थापित तथ्य कि उपरोक्त के दौरान श्री ए. के. सिन्हा की अवैध हिरासत को गलत साबित करने के लिए भरोसा नहीं किया जा सकता है| यदि श्री सिन्हा वास्तव में सी. बी. आई. अधिकारियों की हिरासत में नहीं होते, तो उनके लिए उन्हें चिकित्सा सहायता और ध्यान प्रदान करने और उन्हें निरंतर निगरानी में रखने का कोई अवसर नहीं होता। इसके अलावा, अधिकारियों के अपने खुद के अनुसार, कुछ आपत्तिजनक वस्तुओं की बरामदगी करने के उद्देश्य से वे याचिकाकर्ता के साथ रांची से पटना और वापस जा रहे थे अतः आयोग ने नोटीसी अधकरियों के आपत्ति मे कोई आधार नहीं पाया और उनहे खारिज किया"

इस प्रकार सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा अस्पताल में छाती में दर्द की शिकायत के कारण भर्ती होने में उनके साथ शामिल होने एवं पटना में उनके साथ होने एवं साथ आमें वापस आने के आधार पर आयोग ने यह निष्कर्ष निकाला कि शिकायतकर्ता वास्तव में सी. बी. आई. अधिकारियों की हिरासत में था। आयोग ने यह भी पाया कि शिकायतकर्ता लगातार निगरानी में था। हालांकि इसका विस्तार से उल्लेख नहीं किया गया है, आयोग का मतलब शायद यह था कि जब वे अस्पताल में थे तब उनकी निगरानी की जा रही थी। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि आयोग ने उन अधिकारियों को व्यक्तिगत सुनवाई का जोखिम नहीं उठाया जिन्हें नोटिस पर रखा गया था और न ही पेश करने का कोई अवसर दिया गया था| सबूत दिए गए थे। शिकायत का निर्णय समीक्षा याचिका में दिए गए कथनों और संबंधित अधिकारियों द्वारा दिए गए जवाबों के आधार पर किया गया था। अधिकारियों की याचिका का व्यापक रूप से संभावनाओं के आधार पर परीक्षण किया गया और यह निष्कर्ष निकाला गया कि संबंधित अधिकारी मानवाधिकारों के उल्लंघन के दोषी थे।

सी. बी. आई. अधिकारियों द्वारा उठाई गई तीन कानूनी आपत्तियों को आयोग द्वारा दरकिनार किया गया| सबसे पहले, यह अभिनिर्धारित किया गया कि मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 13 के आधार पर सिविल न्यायालय को प्रदत्त समीक्षा की शक्ति आयोग को उपलब्ध थी। चूँकि पहले का आदेश गुण-दोष पर निर्णय नहीं था, बल्कि केवल एक आदेश था जिसमें आगे से परहेज किया गया था| जाँच आयोग ने महसूस किया कि न्याय के हित में पूरे मुद्दे पर पुनर्विचार करने पर कोई रोक नहीं है। एनएचआरसी (प्रक्रिया विनियम) के

विनियम 8 (1) (बी) पर आधारित दूसरी आपत्ति, जो 'विचाराधीन' मामलों के संबंध में शिकायतों को रोकती है, को इस टिप्पणी के साथ खारिज कर दिया गया कि कथित अनधिकृत के परिणामस्वरूप मानवाधिकारों के उल्लंघन का सवाल है। शिकायतकर्ता को हिरासत में लेना न्यायिक नहीं था। दूसरी महत्वपूर्ण आपत्ति यह है कि आयोग को मामले की जांच करने से रोक दिया गया है कथित अवैध होने की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति के बाद धारा 36 (2) के आदेश के अनुसार हिरासत का जवाब दिया गया था| आयोग द्वारा निम्नलिखित शब्दों में : "मानवाधिकारों का उल्लंघन एक निरंतर गलत है जब तक कि उचित न हो। क्षतिपूर्ति की जाती है। यह कार्रवाई के आवर्ती कारण को जन्म देता है जब तक कि शिकायत का निवारण। मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 बेहतर प्रदान करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया है

मानवाधिकारों का संरक्षण और यह नहीं माना जा सकता है कि शिकायत के निवारण के उपाय से प्रतिरक्षित उल्लंघन केवल एक निश्चित अवधि का अंतराल प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त होग"।

हम आयोग के दृष्टिकोण का समर्थन नहीं कर सकते। आयोग ने आयोग, जो कानून का सृजन है, इसके प्रावधानों से बंधा होता है। इसके कर्तव्यों और कार्यों को अधिनियम द्वारा परिभाषित और सीमित किया गया है। बेशक, किसी भी अन्य वैधानिक पदाधिकारी की तरह, इसमें भी निस्संदेह आनुषंगिकता है या उसे दी गई शक्तियों के संबंध में अपने अधिकार क्षेत्र का प्रभावी ढंग से प्रयोग करने के लिए सहायक शक्तियां लेकिन आयोग को आवश्यक रूप से इसे बनाने वाले अधिनियम द्वारा निर्धारित मापदंडों और अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर कार्य करना चाहिए। अधिनियम द्वारा इसमें निहित। आयोग उन मंचों में से एक है जो मानवाधिकारों के उल्लंघन से उत्पन्न शिकायतों का निवारण कर सकता है। यहाँ तक कि अन्य उपचारों के बिना नहीं। अवलोकन में अंतर्निहित धारणा ऊपर निकाले गए समापन परिच्छेद में गलत आय पर इस आधार पर कि यदि आयोग इस मामले को नहीं उठाता है तो मानवाधिकारों के उल्लंघन से पीड़ित व्यक्ति को उपचार के बिना छोड़ दिया जाएगा।

अब, आइए हम मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम की धारा 36 को देखें,

जो इस प्रकार हैः

36. आयोग की अधिकारिता के अधीन नहीं होने वाले मामले-"

(1) आयोग किसी भी मामले की जांच नहीं करेगा जो राज्य आयोग या किसी अन्य आयोग के समक्ष विधिवत लंबित उस समय लागू किसी भी कानून के तहत गठित।

(2) आयोग या राज्य आयोग उस तारीख से एक साल की समाप्ति के बाद किसी भी मामले की जांच नहीं करेगा जिस दिन मानवाधिकारों के उल्लंघन का गठन करने वाले अधिनियम पर आरोप लगाया गया है।

इस प्रकार अधिनियम की धारा 36 (2) मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले कथित कार्य की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति के बाद किसी भी मामले की जांच करने वाले आयोग के खिलाफ प्रतिबंध लगाती है। इस धारा से यह संकेत मिलता है कि यह एक अधिकारिता प्रतिबंध है। सीमा की अवधि, हालांकि मूल रूप से प्रक्रियात्मक प्रकृति की है, कुछ स्थितियों में अधिकार क्षेत्र में बाधाओं के रूप में भी काम कर सकती है। यदि इसके लिए किसी प्राधिकरण की आवश्यकता है। एस. एस. गाडगिल बनाम में इस न्यायालय की टिप्पणियों का प्रस्ताव। मेसर्स लाल एंड कंपनी, ए. आई. आर. (1975) एस. सी. 171 को वापस बुलाया जा सकता है। आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 34 का निर्माण करते हुए न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी कीः "पुनः निर्धारण के लिए धारा 34 द्वारा निर्धारित अवधि सीमा की अवधि नहीं है। संदर्भ में अनुभाग एक बंधन लगाता है आय-कर अधिकारी की कर लगाने की शक्ति समाप्त हो गई।

सीमान्त शीर्षक में प्रयुक्त भाषा एक अन्य संकेतक है कि यह एक अधिकार क्षेत्र की सीमा है। यह व्याख्या का एक तय नियम है कि प्रावधान की व्याख्या में किसी भी संदेह या अस्पष्टता को दूर करने और धारा के शीर्षक या सीमांत नोट पर भरोसा किया जा सकता है।

भिंका वी. चरण सिंह, आकाशवाणी (1959) एससी 960)

वास्तव में, धारा 36 (2) शब्दों को छोटा नहीं करती है और उपयोग की गई भाषा स्पष्ट और स्पष्ट है। खंड के लिए सीमांत नोट भेजा जा रहा है| केवल इस बात पर विचार करने के लिए कि क्या धारा 36 (2) द्वारा बनाई गई बाधा का आयोग की शक्ति या अधिकार क्षेत्र पर प्रभाव पड़ता है।

आयोग द्वारा धारा 36 (2) के तहत प्रतिबंध को गलत जारी रखने और कार्रवाई के बार-बार होने के सिद्धांत का आह्वान करके समाप्त करने की मांग की गई है। आयोग के अनुसार, मानव अधिकार का प्रत्येक उल्लंघन तब तक निरंतर गलत है जब तक कि उचित क्षतिपूर्ति

नहीं की जाती है। हमारे द्वारा आयोग द्वारा प्रस्तावित इस प्रस्ताव को स्वीकार करना मुश्किल है। इस दृष्टिकोण बिंदु का संक्षिप्त उत्तर यह है कि इस तरह का दृष्टिकोण, यदि स्वीकार किया जाता है, तो धारा 36 (2) को व्यावहारिक रूप से एक अप्रभावी उपबंध बनाता है। इसके अलावा, धारा 36 (2) में नियोजित भाषा के अनुसार हम नहीं सोचते कि गलत जारी रखने की अवधारणा को तत्काल मामले में सेवा में लगाया जा सकता है।

एन. सी. धौंडियल बनाम यूनियन ऑफ इंडिया [रेड्डी, जे.]

निर्धारित समय सीमा मानवाधिकारों के उल्लंघन का गठन करने वाले कथित 'अधिनियम' के लिए संदर्भित है। अवैध निरोध जैसे मामले में, आपत्तिजनक कार्य को तब किया गया माना जाना चाहिए जब किसी व्यक्ति को हिरासत में रखा जाता है और यह तब तक जारी रहता है जब तक कि प्रभावित व्यक्ति अवैध हिरासत में रहता है। आक्रामक कार्य का आयोग एक पर पूरा होता है समय का विशेष बिंदु और इसके बाद भी ऐसा नहीं रहता| अनधिकृत हिरासत समाप्त हो जाती है। यह विवाद में नहीं है कि शिकायतकर्ता को विशेष न्यायाधीश के समक्ष 3.4.1994 पर पेश किया गया था और रिमांड प्राप्त की गई थी| कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार। अनधिकृत निरोध का कथित कार्य जो मानवाधिकारों के उल्लंघन को जन्म देता है, 3.4.1994 पर बंद हो जाता है और इसके बाद यह स्थायी नहीं होता है। यह अवैध निरोध का प्रभाव नहीं है जो धारा 36 (2) द्वारा विचार किया गया है, बल्कि यह स्वयं अवैध कार्य है। यह कहना एक विरोधाभास होगा कि 3.4.1994 से परे गिरफ्तारी या निरोध कानून के अनुसार था और साथ ही गिरफ्तारी/निरोध गलत बना रहा। इसलिए ऐसा नहीं किया जा सकता। निरंतर गलत की श्रेणी के तहत लाया जाए जो समान है आपराधिक कानून के क्षेत्र में 'निरंतर अपराध' अभिव्यक्ति के लिए। यह नहीं हो सकता। कहा जा सकता है कि हिरासत का कथित गलत कार्य हर दिन खुद को दोहराता है| शिकायतकर्ता को मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने और कानून के अनुसार रिमांड प्राप्त करने के बाद भी। 3.4.1994 के अलावा, सकारात्मक या निष्क्रिय के माध्यम से कानून द्वारा लगाए गए दायित्व का कोई उल्लंघन नहीं हुआ था। कथित गलत काम करने वालों का आचरण इसे निरंतरता के रूप में चिह्नित करने के लिए इसलिए, शिकायत की जांच 3.4.1995 तक समाप्त हो जाती है। जैसा कि धारा 473 द. प्र. स. में एक वर्ष की सीमा की अवधि बढ़ाएँ जाने का अधिनियम में कोई प्रावधान नहीं है

हालांकि, प्रक्रिया के मामले में में आम तौर पर एक से अधिक घटनाओं के संबंध में एक शिकायत शिकायत करने से एक साल पहले की स्थिति सामान्य रूप से की अभिव्यक्ति की वैधता के बावजूद, स्वीकारणीय नहीं है।

आइए हम विनियमन के दृष्टिकोण से ही इस मुद्दे की जांच करें। विनियमन का तात्पर्य है कि यदि असाधारण परिस्थितियाँ मौजूद हैं, तो शिकायत एक वर्ष की समाप्ति के बाद भी पूछताछ की जा सकती है। क्या कोई है?

इस मामले में बनाई गई असाधारण परिस्थितियाँ?

आयोग का विवादित आदेश। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, शिकायतकर्ता द्वारा दायर याचिका आयोग को आरोप पत्र दायर किए जाने के एक दिन बाद प्राप्त हुई थी, हालांकि इसकी एक पूर्व तिथि है। लगभग 4 साल तक शिकायतकर्ता चुप रहा। इस दीर्घ मौन के लिए शिकायत में दिया गया स्पष्टीकरण यह था कि वह इस धारणा में था कि एनएचआरसी को मामले की सूचना देकर वह सीबीआई अधिकारियों का विरोध कर रहा होगा, लेकिन यह महसूस करने के बाद कि वे निष्पक्ष और निष्पक्ष रूप से काम नहीं कर रहे थे और उन्होंने उसे परेशान करना जारी रखा, उसने एनएचआरसी के समक्ष याचिका दायर करने के बारे में सोचा। आयोग ने अपनी ओर से इस स्पष्टीकरण का उल्लेख नहीं किया जो वास्तव में कोई स्पष्टीकरण नहीं है, और न ही उसने धारा 36 (2) द्वारा निर्धारित समय के लंबे अंतराल के बाद हस्तक्षेप को उचित ठहराने वाली किसी भी असाधारण परिस्थितियों का विज्ञापन किया। इस प्रकार आयोग ने निरंतर गलत होने के सिद्धांत को लागू करके अधिकार क्षेत्र पर अंकुश लगाने की कोशिश की, जैसा कि हमने पहले माना था, जिसे बिल्कुल भी लागू नहीं किया जा सकता है। मामले के इस दृष्टिकोण में, आयोग द्वारा सी. बी. आई. के निदेशक को दिया गया निर्देश, जिसका रिट याचिकाकर्ता के सेवा करियर पर निस्संदेह प्रभाव पड़ता है, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है।

इस पहलू पर अपनी चर्चा को समाप्त करने से पहले, हम इस न्यायालय द्वारा परमजीत कौर बनाम मामले में जो कहा गया था, उसे दोहराते हुए स्पष्ट करना चाहेंगे।

पंजाब राज्य, [1999] 2 एस. सी. सी. 131 कि एक ऐसे मामले में जहां एन. एच. आर. सी. मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच और जांच करने के लिए आगे बढ़ता है| संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के निर्देश, धारा 36 (2) में निहित धारा लागू नहीं होगी क्योंकि ऐसी स्थिति में एन. एच. आर. सी. अधिनियम के प्रावधानों के तहत कार्य नहीं करता है, बल्कि एक विशेषज्ञ निकाय के रूप में कार्य करता है जो उच्चतम न्यायालय को अनुच्छेद 32 के तहत अपनी संवैधानिक शक्ति के निर्वहन में सहायता करता है।

सवाल यह है कि क्या अधिनियम की धारा 13 आयोग को सिविल न्यायालय को प्रदत्त पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करने के लिए सशक्त करती है। और यदि हां, तो ऐसी शक्ति के प्रयोग के लिए क्या शर्तें हैं। संतुष्ट हैं, हमारे सामने बहस की गई है। किसी भी मामले में, क्या आयोग के पास बंद शिकायत को फिर से खोलने और उसी में जांच करने की शक्ति है| नई सामग्री के प्रकाश में न आने पर भी बहस की गई है। इन प्रश्नों पर हमारे इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए विचार करने की आवश्यकता है कि आयोग ने धारा 36 (2) द्वारा बनाए गए प्रतिबंध के बावजूद जांच करने में अपने अधिकार क्षेत्र को पार कर लिया है।

परिणामस्वरूप, एन. एच. आर. सी. का दिनांकित 12.6.2000 का आदेश रद्द कर दिया जाता है| रिट याचिका (सिविल) सं. 42/2001 स्वीकृत की गई| विशेष अनुमति याचिका सं. 8220/2001, 11182/2001, 11186 और 14392/2001 जो कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रदत्त अंतरिम आदेशों के विरूद्ध दाखिल की गई हैं को खारिज किया गया| एक हस्तांतरण आवेदन इस अवलोकन के साथ कि झारखंड उच्च न्यायालय अपने अभिलेख पर उपलब्ध संबंधित रिट याचिकाओं/ एल. पी. ए. के इस आदेश की आलोक में निष्पादन हेतु प्रस्तुत हो सकेगा, को भी खारिज किया गया| न्याय शुल्क के संदर्भ में कोई आदेश नहीं|

रिट याचिका स्वीकृत/ विशेष अनुमति याचिका एवं हस्तांतरण आवेदन खारिज|

अनुवादक
(विरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव)
जिला एंव अपर सत्र न्यायधीश-तृतीय
साहेबगंज